International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 567-569

तुलसीदास की सामाजिक चेतना का प्रभाव

निशा देवी
सहायक प्रवक्ता, सी. आर. ए. कालेज, सोनीपत, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

तुलसीदास समाज में उच्च मनोवृति के पुरुष, समाज के प्रवाह को सही दिशा में मोडने का प्रयास करते हैं। महाकवि तुलसीदास मुगल साम्राज्य की सुख–शान्ति से उसके ऐश्वर्य वैभव के चकाचौंध से प्रभावित होकर आश्वस्त होने वाले व्यक्ति न थे। तुलसीका सारा प्रयास जनार्दन के मांनसपरिष्कार हेतु था। वह जिस समाज की कल्पना करके चले, वह स्वार्थ त्याग और बलिदान सिखाने वाला था। उन्होंने जिस राज्य की कल्पना की थी वह लोकाराधन के लिए राज्य, सुख, राग आदि सबको निछावर कर देने वाला था। तुलसीदास की सामाजिक चेतना के विविध आयाम है।

आदर्शराज की भावना

तुलसी के आदर्श राज्य का नाम रामराज्य है। इस राज्य की सर्वोपरि विशेषता थी– प्रजा में पारस्परिक ऐक्य। ऐक्य के अभाव में वैर की कृदधि अनिवार्य हैं यदि राजा प्रतापी हो वहॉ विषमता का परिहार हो जाता है। रामराज्य में–

''बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई।

जहॉ विषमता नहीं वहॉ सुख और शान्ति का विकास होता ही है प्रजा निर्भय अशोक और नीरोग रहती है–

'रामराज राजत सकल धरम निरत नर नारि।
राग न रोष न दोष दुख सुलभ पदारथ चारि।

रामराज्य में अल्पमृत्यु, रोग, दरिद्रय आदि का अभाव होता है। राजा और प्रजा के लिए धर्म अर्थात कर्तव्यनिष्ठता सर्वोपरि होनी चाहिए। रामराज्य में सभी सदाचारी, धर्मप्राण, गुणज्ञ, कृतज्ञ, ज्ञानवान् और पंडित थे।

राजा–प्रजा का संबंधः

तुलसीदास प्रजा के प्रति राजा की वात्सल्य भावना को ठीक समझते हैं। वात्सल्य की भावना से स्वामित्व का अहंकार अपने आप लीन हो जाता है। राजा के लिए प्रजा प्रिय है। राजा को उसका प्रेमी होना चाहिए। प्रजा में भी राजा का प्रियत्व जगे, इसके लिए राजा को प्रयत्नशील होना चाहिए। राजा अपने किस आचरण से प्रियत्व प्राप्त कर सकता है, इसके अनेक सुझाव दोहावली में दिए गए है। राजा की समता पिता से की गई हैं।राजा को सबके लिए समदर्शी होना चाहिए, पर उसके लिए समान वितरण आवश्यक नहीं है। वह मुखिया है–

'मुखिया मुख सों चाहिए खान पान को एक।
पातई पोपइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक।'

तुलसीदास जी कहते हैं कि राजा को प्रजा से इस प्रकार कर लेना चाहिए कि उन्हें कर वसूली का पता न चले। जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों से जल खीचता है। पर यह कोई नहीं देख पाता कि जल कैसे आकाश में चला गया, पर जब वही वृष्टि के रुप में लौटता है तो सभी को प्रत्यक्ष दिखाई देता है–

'बरखत हरषत लोग सब करषात लखै न कोय।
तुलसी प्रजा सुभाग तें भूप भानु सो होय।'

तुलसीदास प्रजातंत्र प्रभाली चाहते थे। वे ऐसे राजा को भी तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं जो प्रजा को प्राणप्रिय नहीं समझता। उनका रामराज्य प्रजाराज्य ही है। वे लोकाराध ही चाहते थे।

प्राचीन वर्णाश्रम धर्म की प्रतिष्ठा

गोस्वामी जी को पारस्पाकि रुप में वर्णव्यवस्था मान्य थी, परंतु वे उसके कट्टरसमर्थक न थे। वे भक्ति के साथ ज्ञान और कर्म को भी मानते थे। ज्ञान की मान्यता के कारण वे वेद का तिरस्कार नहीं करते थे और कर्म की मान्यता के कारण अर्थव्यवस्था को भी मानते थे। समाज की मर्यादा तोडकर कोई नया पथ नहीं चलाना चाहते थे, इसी से उन्होंने वर्णव्यवस्था का प्रत्यक्ष खंडन नहीं किया।
'मानस' में पात्रों के द्वारा उन्होंने वर्णाश्रम धर्म का समर्थन इसी से कराया। विनयपत्रिका में कहा गया है–

'जाके प्रिय न राम वैदेहि।
सों त्यागिये कोटि बैरी सम जधपि परम सनेहि।'

तुलसी जन्मना की बात को परम्पारानुसार स्वीकार कर लेते हैं, पर कर्मणा के लिए उस व्यवस्था के गुण कर्म का नियोजन करके भक्ति का विनियोजन करते है। वे भक्ति को सामाजिक भूमिका पर ले आना चाहते थे। केवल व्यक्तिगत साधना के लिए उनकी भक्ति नहीं है ओर न केवल लोकसाधना के लिए है। वह दोनों का योग है। वे यही चाहते है–

–तुलसी धर बन बीच ही राम प्रम पुर छाइ।

तुलसी के आश्रमों में से गृहस्थाश्रम पर ही विशेष बल दिया है कवि ने मानस तथा अपने अन्य काण्यों का निर्माण जीवन के लिए, चलित जीवन के लिए ही किया है और भारतीय समाज में मुख्य है– गृहस्थी। जो व्यक्ति परिवार के लिए कुछ दे सके, उनकी मानसिक बुमुक्षा की शान्ति कर सके, वह बहुत कुछ कर चुका। अनुसूया ने सीता को पतिव्रत की जो शिक्षा दी है, वह भारतीय समाज की पारंपरिक स्थिति का ध्यान रखकर कवि के द्वारा

कहलाई गई भक्ति है।

पारिवारिक जीवन का आदर्श

तुलसी ने विनयपत्रिका में भारतीय परिवारों में आए हुए विकारों को बताया हैं। मानय में रामपरिवार में सिद्धान्त रुप में उन्होंने इसे व्यावहारिक रुप दिखा दिया। मानस में रामचरित के भीतर रामपरिवार में उन्होंने उसके स्वरुप की पूर्व अभिव्यक्ति की है वे भाई–भाई, पति–पत्नी, पिता–पुत्री, माता–पुत्र, स्वामी–सेवक आदि के संबंधों और उनके निर्वाह की जैसी झलक दिखाते हैं उसमें सम्मिलित परिवार शैली का पूर्व समर्थन निहित है जैसे–

'अनुचित उचित विचार तत्रि जे पालहिं पितु–बैन।
ते भजन सुख–सुजस के बसहिं अमरपति ऐन।

कवि ने व्यक्ति–साधना और जागतिक व्यवहार में अंतर किया हैं विमाता के प्रति मातृवत व्यवहार उन्होंने जागतिक परम्परा के रुप रखा। कवि ने कैकेयी को बचाने के लिए 'गिरा' का प्रयोग करके उसकी कार्यवाही से तटस्थ–सा कर दिया है तथा चित्रकूट में उसका धोर पश्चाताप दिखाकर उसकी शालीनता प्रकट की है। तुलसी ने सेवक–सेव्यभाव की भक्तिपक्ष में महता भी स्वीकार की है। उन्होंने सेवक के गुण–धर्मों का उल्लेख किया है। इन्हें परिवारिक भाव से जोडा गया है। भंधरा से कैकेयी का संबंध इसी प्रकार लक्षित कराया गया है। कैकेयी जब मंथरा पर बिगडती है और इस संबंध का अतिरेक करके उसे सचमुच नीची श्रेणी का मानकर उसके साथ वैसी ही शब्द व्यवहार करने लगती है तो वह व्यक्ति होकर अपनी वास्तविक स्थिति कहती है–

'कोड नृप होइ हमहिं का हानी।
चेरी छॉदि अन होव कि रानी।'

कवि ने पशुपक्षियों के साथ भी आत्मीयता का परिचय दिया है। शुक और सरिका के संवाद में तुलसी ने गीतावली में इसकी चरम अभ्व्यिंजना की है। वे राम के वियोग से पीडित होकर कहते है।
'हम पॅख पाइ पींजरनि तरसत अधिक अभाग हमारो।'

मर्यादावाद

भारत में ही नहीं, अपितु जगत् में समाज का निर्माण मर्यादा बंधन के लिए किया गया। समाज ने सभी को एक समान माना है तथा समाज चलान हेतु सभी को कर्तव्य व अधिकार निश्चित किए गए हैं। तुलसी ने समाज की मर्यादा का अधिक ध्यान रखा है। उन्होंने धर्म को लक्ष्य करके मर्यादावाद के लिए सतत प्रयत्न किया है। मानस में सर्वत्र मर्यादा का पालन किया गया है। कवि ने धर्म पालन की महता समाज के सामने रखी है। क्षमा के साथ–साथ दंड का विधान भी है। जिनमें दृवृति प्रकृतिस्थ है। जिनमें दुर्वृति आरोपित है, उन्हें क्षमाकरना राम की मर्यादा है। भक्तों यह विशेष आकर्षक है–

जेहि अध वधेउ व्याध जिमि वाली।
पुनि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली।
सो करतूति कविभीषन केरी।
सपनेहु सो न राम हियॅ हेरी।
इसके साथ ही यह भी श्रुतिमार्ग है
जो सठ दंड करउॅ जहिं तोरा। भ्रष्ट होई श्रुति मारग मोरा।'

तुलसी का मर्यादाचाद समाजिक है, लौकिक है तथा उसमें उचित की सब प्रकार से समाई है।

समाज में स्त्रियों का सथान

तुलसी ने कवि रुप में नारियों के विभिन्न स्वरुपों की कल्पना की और उनका अपने प्रबंध में यथास्थान चित्रण किया। समाज–संस्कार की दृष्टि से उन्होंने नारी के संबंध में वह धारणा ग्रहण की जो परंपरा से चली आ रही थी। साधक की दृष्टि से उन्होंने नारी को बहुत ही गर्हित कहा।
तुलसी मर्यादावादी थे। उनका विचार था कि समाज संचालन में नारी के लिए पतिव्रता होना जरुरी है। कवि ने नारी जी पूजा के बदले उसके अपावनत्व और जडत्व आदि का उल्लेख अधिक किया है। रामपरिवार की महिलाओं का उन्होंने जैसा चित्रण किया है। वह नारीगत उनकी भावना का परिहार नहीं हैं। वे 'पुत्रवती युवती जग सोई। रधुवर भगत जासु होई।' को ही ठीक समझते है। यद्यपि कैकेयी के पुत्र भरत की चरमभक्ति राम में थी, पर व्यक्तिगत रुप से कैकेयी ने राम के प्रति जैसा व्यवहार किया, उसकी दृष्टि से वे सुमित्रा को कैकेयी के राम के प्रति जैसा व्यवहार किया, उसकी दृष्टि से वे सुमित्रा को कैकेयी से उत्तर मानते हैं नारी के संबंध में कवि की धारणा अच्छी नहीं है।

'नारि बिस्व माया प्रगट'।

उनके अनुसार' संसार में फॅसाये रहते वाली नारी ही है। यदि कोई नारी से छुट जाए तो वह संसार के बंधन से शीध्र छुट सकता है। परंतु कहीं कहीं नारियों की समाजगत पराधीनता के कारण उनके हृदय में करुणा की भावना जग जाती है–

'कत विधि सृजी नारि जगमाही।
पराधीन सपनेहुॅ सुख नाही।

प्राचीन नियमों व विश्वासों का वर्णन

तुलसीदास ने अपने समय के अंधविश्वासों नियमों आदि का वर्णन किया है। कवि की इनमें निष्ठा रही हो। ऐसी बात नहीं। भगवदभक्त के लिए ये कुछ महत्व नहीं रखते। एक भक्त ने कहा है–

'सबै धरी सुभधरी है सबै बार सुभबार।
भरनी भद्रा ताहि दिन जब रुठै करताए।

भक्त के लिए भगवत् प्रेरणा ही सब कुछ है। मुहूर्त–चिंतन और शकुन विचार कुछ नहीं। तुलसीदास ने स्पष्टतया इनका विरोध किया है। वे दोहावली में कहते हैं–

'कब कोढी काया लही जग बहराइच जाई।
प्राचीन युग में जीवन संचालन हेतु कुछ नियम बनाए गए।

वे साध्य रुप में थे। धीरे–धीरे वे दुरुह होते गए। तुलसी ने इनका बार–बार उल्लेख किया है। वैराग्यसंदीपनी में इन्होंने इनका उल्लेख किया है। कवि ने कवितावली में अपने समय की खराब हालत का वर्णन किया है। तत्कालीन समाज विपन्नता की स्थिति में था। दरिद्रता रुपी रावण ने सब पर कब्जा कर रखा था।
तत्कालीन समाज में कर्तव्य भावना लुप्त हो चुकी थी। सभी

जातियों के लोग स्वार्थपूर्ति लगे हुए थे। वे अपना विवेक खो बैठे थे तथा कल्पवृक्ष व बबूल में अंतर नहीं कर पा रहे थे।

निष्कर्ष

कवि समाज का अंग होता है। समाज में हुए परिवर्तन उस पर अवश्य प्रभाव डालते है। कवि तुलसी भी अपने युग से प्रभावित हुए। उन्होंने उस समय का चित्रण करने के साथ–साथ कुछ आदर्शों की स्थापना भी की जिनसे समाज चल सके। उन्होंने रामराज्य की परिकल्पना की। वे सुसंगठित व स्वस्थ समाज के पक्षधर है।

संदर्भ

1. तुलसी के सामाजिक आदर्शों की स्थापना
2. तुलसी द्वारा दासता से मुक्ति का संदेश
3. तुलसीदास की भक्ति भावना
4. धर्म के प्रति स्वाभाविक प्रकृति
5. तुलसीदास की सामाजिक चेतना